इकाई 8 यूरोपीय संघ के सदस्य : जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन तथा यूरोपीय एकीकरण

संरचना

8.0 प्रस्तावना

8.1 उद्देष्य

8.2 राष्ट्रीय पात्र तथा यूरोपीय संघटन

8.3 जर्मनी तथा यूरोपीय संघ

8.3.1 जर्मन अस्मिता तथा यूरोपीय संघ

8.3.2 जर्मनी के समक्ष समस्याएँ

8.3.3 यूरोपीय संघ को सषक्त करना्

8.4 फ्रांस तथा यूरोपीय संघ

8.4.1 फ्रांस द्वारा पहल

8.4.2 यूरोपीय संघ में फ्रांस की भूमिका

8.5 ब्रिटेन तथा यूरोपीय संघ

8.5.1 ब्रिटेन के दृष्टिकोण में परिवर्तन

8.5.2 यूरोपीय संघ में ब्रिटेन की स्थिति

8.6 सारांष

8.7 अभ्यास प्रष्न

8.8 संदर्भ तथा कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.0 प्रस्तावना

यूरोपीय संघटन के लिए आन्दोलन द्वितीय विष्व युद्ध के बाद आरंभ हुआ जिसने पिछले 50 वर्षों में यूरोप द्वारा अनुभव की जाने वाली वास्तविक समस्याओं अर्थात् निर्बाध आक्रामक राष्ट्रवाद के खतरों से जुड़ी समस्याओं का पर्दाफाष कर दिया। इसमें कोई शक नहीं कि पिछली शताब्दी के दो विष्व युद्ध यूरोप की प्रमुख शक्तियों, विषेषकर फ्रांस तथा जर्मनी, के बीच राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा की पराकाष्ठा थी। युद्ध के बाद यूरोप के चिन्तकों का मानना था कि इस पुरानी प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने का एक ही तरीका है – परस्पर सहमति के आधार पर ऐसी एकता कायम की जाए जो यूरोप के आर्थिक तथा राजनीतिक पुनर्निर्माण में सहायता करे तथा यूरोप को विष्व स्तर पर अपना उचित स्थान दिलाने में भी सफल हो।

यूरोपीय एकता आन्दोलन इस आत्म–विष्लेषण (self-introspection) का परिणाम था जिसने अगले 40 वर्षों में – 1952 में स्थापित यूरोपीय कोयला तथा इस्पात समुदाय (European Coal and Steel Community; ECSC) से आरंभ होकर, 1958 में यूरोपीय आर्थिक समुदाय (European Economic Community; EEC) से होते हुए, 1991 की मैस्टरिक संधि (Maastricht Treaty) के परिणामस्वरूप यूरोपीय संघ के रूप में नया अवतार लिया। शीत युद्ध की अवधि में यूरोपीय संघटन की प्रक्रिया केवल पष्चिमी यूरोप तक सीमित रही। शीत युद्ध की समाप्ति के बाद यूरोपीय एकता आन्दोलन ने एक नए युग में प्रवेष किया है तथा यह केन्द्रीय तथा पूर्वी यूरोप के देषों की तरफ अग्रसर हो रहा है। यूरोपीय संघ की वर्तमान सदस्य संख्या 27 है तथा अब इसका चरित्र पार–यूरोपीय (pan-European character) बनता जा रहा है।

यूरोपीय एकता आन्दोलन के ऐतिहासिक विकास में दो विषिष्ट उपागमों का सहारा लिया गयाः (i) क्षेत्रीय स्तर पर सहयोग के परम्परागत दृष्टिकोण को अन्तरसरकारीवाद उपागम (inter-governmental approach) का नाम दिया जाता है। इसमें भागीदार देष स्वयं ही सहयोग प्रक्रिया आरंभ करते हैं और यह निष्चय करते हैं कि यूरोपीय संघ द्वारा जारी किए गए दिषा–निर्देषों का पालन करते एवं अपनाते हुए यह सहयोग प्रक्रिया किस सीमा तक

संभव है। (ii) दूसरे उपागम को अधिराष्ट्रवाद (supranationalism) का नाम दिया जाता है जिसमें अधिराष्ट्रीय संघटन के सदस्य देष इस केन्द्रीय संस्था को स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने का अधिकार एवं क्षमता प्रदान करते हैं, यहाँ तक कि उन मामलों में भी जो परम्परागत दृष्टिकोण से राज्यों के विषेषाधिकार माने जाते हैं। वर्तमान यूरोपीय संघ में दोनों उपागमों का समावेष है हालाँकि इसके प्रमुख नीति निर्णय ढाँचे का चरित्र अधिराष्ट्रीय है। यह इकाई यूरोपीय संघ के प्रमुख राज्यों की चर्चा करेगी, विषेषतः जर्मनी, फ्रांस तथा ब्रिटेन (United Kingdom) ने यूरोपीय संघटन द्वारा क्या भूमिका निभाई गई है।

8.1 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्नलिखित विषयों को समझने के योग्य हो जाएँगेः

- यूरोपीय संघ तथा सदस्य–राज्यों के बीच सम्बन्ध;
- यूरोपीय संघ में जर्मनी का योगदान;
- यूरोपीय संघ में फ्रांस द्वारा निभाई गई भूमिका;
- यूरोपीय संघ में ब्रिटेन (United Kingdom) की भूमिका; और
- एक राजनीतिक अभिकर्त्ता के रूप में यूरोपीय संघ की प्रकृति का मूल्यांकन।

8.2 राष्ट्रीय पात्र तथा यूरोपीय संघटन

जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है कि यूरोपीय संघटन (integration in Europe) प्रक्रिया में दो उपागमों : अन्तरसरकारीवाद तथा अधिराष्ट्रवाद का समावेष है। यह सत्य है कि यूरोपीय एकता आन्दोलन के लिए संवेग (momentum) तो 1945 के तुरन्त बाद ही बनना आरंभ हो गया था। ब्रिटेन अन्तरसरकारीवाद का प्रबल समर्थक था और यही एक ऐसा देष था

जिसकी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति को अन्य यूरोपीय देषों की तरह धक्का नहीं लगा था। अधिराष्ट्रवादी उपागम के बारे में ब्रिटेन थोड़ा शंकालु था क्योंकि इसमें राष्ट्रीय प्रभुसत्ता में दखल देने की क्षमता थी। इसके विपरीत फ्रांस, पष्चिमी जर्मनी, बैल्जियम, नीदरलैण्ड तथा इटली जैसे देषों का विचार था कि यूरोप की समस्या का वास्तविक हल केवल सहयोग के उग्रवादी उपागम में ही निहित है। वे यह भली भांति जानते थे कि केवल कुछ क्षेत्रों जैसे व्यापार, उद्योग, व्यापारिक प्रतिस्पर्धा, ऊर्जा, परिवहन – की संस्था का निर्माण काफी नहीं होगा। आवष्यकता एक ऐसी संस्था के निर्माण की थी जो भागेदारी राज्यों द्वारा सहमत मुद्दों पर सार्वजनिक नीतियाँ अपना सके और जिन्हें सदस्य–राज्य अपने–अपने क्षेत्राधिकार (territorial jurisdiction) में लागू करने के लिए कटिबद्ध हों।

परन्तु जैसा बाद की चर्चाओं में स्पष्ट हुआ, अधिराष्ट्रीय सहयोग के कई समर्थक भी संवेदनषील उच्चतर राजनीतिक क्षेत्रों (sensitive high political areas) – जैसे विदेषी मामले एवं सुरक्षा, न्याय एवं घरेलू मामले, आप्रवासी तथा अन्य सामाजिक–आर्थिक मामलों को राष्ट्रीय क्षेत्र से अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हस्तान्तरित नहीं करना चाहते थे। इसका उदाहरण यूरोपीय संघ की विभिन्न सामुदायिक संस्थाओं की रचना है जिन्हे निर्णय लेने की स्वायत्तता तो प्रदान की गई है परन्तु दो महत्वपूर्ण अन्तरसरकारी क्षेत्र – सांझी विदेष एवं सुरक्षा नीति (Common Foreign and Security Policy; CFSP); और न्याय एवं घरेलू मामले (Justice and Home Affairs; JHA) – इसके क्षेत्राधिकार से बाहर रखे गए। यूरोपीय संघ की निर्णय–निर्माण प्रक्रिया का मूल आधार यह है कि विभिन्न सदस्य–राज्यों के राष्ट्रीय हित सांझे समुदाय के निर्माण तथा स्पष्टीकरण द्वारा बेहतर सुरक्षित हो सकते हैं जो सांझी संस्थाओं द्वारा लिए गए निर्णयों तथा सदस्य–राज्यों द्वारा कार्यान्वित किए जाने की प्रक्रिया में परिलक्षित होते हैं।

अधिराष्ट्रीय चरित्र होने के बावजूद, यूरोपीय संघ के निर्णय–निर्माण प्रक्रिया का विकास इस तरह से हुआ है जिसमें प्रत्येक राज्य समुदाय द्वारा निर्मित नीतियों तथा कानूनों के निर्माण में उचित भागेदारी सुनिष्चित कर सके। यही कारण था कि समुदाय की निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में मंत्री परिषद को केन्द्रीय भूमिका दी गई। यह ऐसा मंच है जिसमें सभी सदस्य–राज्यों के राष्ट्रीय हितों की अभिव्यक्ति होती है तथा उन्हें सांझी नीतियों में

परिवर्तित करने का यत्न किया जाता है। रोम की संधि में निर्णय–निर्माण प्रक्रिया बहुमत के नियमों पर आधारित होने के बावजूद समुदाय की कार्य प्रणाली इस आधार पर चल रही है कि जहाँ किसी देष के आवष्यक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय हित का प्रष्न हो, वहाँ निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में ढ़ीलापन दिखाया जाए तथा आवष्यकता पड़े तो समझौता भी कर लिया जाए। परन्तु जब एक बार निर्णय ले लिया जाता है तो सभी सदस्य–राज्य उसे लागू करने के लिए कटिबद्ध होते हैं। उन्हें लागू न करने से वह देष यूरोपीय आयोग द्वारा निन्दा का पात्र बन सकता है तथा संधि के उल्लंघन के नाम पर उसे यूरोपीय कोर्ट ऑफ जस्टिस में भी ले जाया जाता है।

अपने 50 सालों के अस्तित्व के बावजूद सदस्य–राज्यों द्वारा यूरोपीय संघ को नियंत्रित करने की भूमिका तथा संघटन को आगे बढ़ाने की क्रिया अभी भी चर्चा का विषय बने हुए हैं। कुछ विद्वानों का विचार है कि निर्णय–निर्माण प्रक्रिया के समय मन्त्रि परिषद् में राष्ट्रीय मंत्रियों की विषिष्ट भूमिका इस बात का आष्वासन है कि यूरोपीय संघ की निर्णय प्रणाली को सदस्य–राज्य सफलतापूर्वक नियंत्रित करने की योग्यता रखते हैं। इसके विपरीत, कुछ विष्लेषकों का मानना है कि मन्त्रि परिषद् में समिति व्यवस्था ने अपना एक विषिष्ट चरित्र, गतिषीलता तथा शक्ति प्राप्त कर ली है जिसने की निर्णय प्रक्रिया तथा निष्कर्षों पर सरकारों के पदाधिकारियों का नियंत्रण कमज़ोर कर दिया है। इनका विचार है कि मन्त्रि परिषद् की समितियाँ अपने राज्यों के विषिष्ट पदाधिकारियों की इच्छा का अनुसरण नहीं करती।

अन्ततोगत्वा, यूरोपीय संघ के नीति निर्माण के जटिल तथा बहुस्तरीय रचनातंत्र का समुदाय द्वारा अपनाई जाने वाली नीतियों पर राष्ट्रीय प्रभाव किस सीमा तक होता है, इसका आकलन करना काफी मुष्किल है। यह बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि विचाराधीन मुद्दे तथा नीतियाँ क्या हैं? किस राज्य–विषेष के राष्ट्रीय हित तथा कटिबद्धताएँ क्या हैं? परिणामस्वरूप, समुदाय की नीति–निर्माण प्रक्रिया में लम्बी चलने वाली बहसें, समझौतें, लेने–देन आदि आम बातें हैं।

8.3 जर्मनी तथा यूरोपीय संघ

यूरोपीय संघटन प्रक्रिया में जर्मनी एक प्रमुख एवं महत्वपूर्ण देष रहा है। युद्धोपरान्त यूरोपीय एकीकरण आन्दोलन को निष्चित आकार देने में यह फ्रांस का मुख्य सहयोगी रहा। इसके साथ–साथ, पिछले 50 सालों में जर्मनी में हुए गहन परिवर्तनों, विषेषतः 1990 के एकीकरण, ने इसकी प्राथमिकताओं को, (विषेषतः घरेलू चुनौतियों ने) अत्यधिक प्रभावित किया है जो यूरोपीय संदर्भ में एक क्रांतिकारी पहल की माँग कर रही थी।

द्वितीय विष्व युद्ध के बाद जर्मनी दो राज्यों में बँट गया – जर्मन संघीय गणराज्य (Federal Republic of Germany; FRG) अर्थात् पष्चिमी जर्मनी, तथा जर्मनी प्रजातान्त्रिक गणराज्य (German Democratic Republic: GDR) अर्थात् पूर्वी जर्मनी। जर्मन संघीय गणराज्य यूरोपीय समुदाय के मूल सदस्यों में से था तथा यह यूरोपीय संघटन का निरन्तर समर्थक रहा है, इसके बावजूद भी कि यह यूरोपीय समुदाय (European Community; EC) के बजट का सबसे बड़ा अंषदाता था जिसके फलस्वरूप इसे "यूरोप का भुगतानकर्त्ता" (Europe's paymaster) भी कहा जाता था। 1990 में एकीकरण के बाद जनसंख्या तथा आर्थिक शक्ति दोनों आधारों पर जर्मनी यूरोपीय संघ का सबसे बड़ा अंषदाता बन गया है। जर्मन अर्थव्यवस्था यूरोप की सबसे बड़ी तथा विष्व स्तर पर तीसरे स्थान की अर्थव्यवस्था है।

8.3.1 जर्मन अस्मिता तथा यूरोपीय संघ

द्वितीय विष्व युद्ध में हार तथा विभाजन के बाद पष्चिमी जर्मनी के सामने सबसे बड़ी चुनौती राष्ट्रीय अस्मिता (national identity) को पुनः स्थापित करना था। पूर्वी जर्मनी के सोवियत रूस के खेमे में शामिल होने से इसकी आवष्यकता और अधिक बढ़ गई। पष्चिमी जर्मनी राज्य की भावी रूपरेखा पर होने वाली राष्ट्रीय/स्थानीय चर्चाओं में सोषल डेमोक्रेटिक पार्टी (Social Democratic Party; SPD) पूर्वी जर्मनी के साथ एकीकरण तथा बाद में एक तटस्थ राज्य का निर्माण करने के पक्ष में थी। इसके विपरीत कोन्रैड एडनार (Konrad Adenauer) की अध्यक्षता में क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक संघ (Christian Democratic Union; CDU) ने इस दृष्टिकोण को रद्द कर दिया तथा जर्मनी को पष्चिमी खेमे में सम्मिलित कर दिया। क्योंकि युद्धोपरान्त वर्षों में जर्मन राजनीति पर क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक

संघ और विषेषकर एडनार का बोलबाला था अतः पष्चिमी जर्मनी की जो अस्मिता उभर कर आई (जिसमें जर्मन इतिहास की सर्वोत्तम विरासतें भी निहित थीं) वह थी – पष्चिमी जर्मनी पष्चिमी सांस्कृतिक व्यवस्था पर आधारित राज्यों का अभिन्न अंग है तथा जर्मन संघीय गणराज्य अमेरिका का निष्ठावान तथा भरोसेमन्द मित्र है। पष्चिमी जर्मनी की यह पष्चिमोन्मुखी प्रवृत्ति 1950 के दषक में फ्रांस द्वारा आरंभ की गई यूरोपीय संघटन की पहल के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण में परिलक्षित हुई। पष्चिमी जर्मनी के अधिकतर मतदाताओं ने भी इस अस्मिता को स्वीकार कर लिया। यह अस्मिता राष्ट्रीय अस्मिता बन गई जिसे धीरे–धीरे सभी दलों ने अपना लिया, विषेषतः सोषल डेमोक्रेटिक पार्टी ने भी जिसे यह आष्वासन देना पड़ा कि यदि वे सरकार बनाती है तो पूर्वी जर्मनी के साथ सम्बन्ध सुधारने के प्रत्यनों के बावजूद उन्हें पष्चिमी खेमे के प्रति कटिबद्धता निभानी पड़ेगी ताकि सोषल डेमोक्रेटिक पार्टी के दृष्टिकोण में किसी तरह की तटस्थता (neutralist tendencies) दिखाई न देने लगे।

1950 तथा 1960 के दषकों में क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक संघ ने ऐसी सरकारों की अध्यक्षता की जिसे जर्मनी का "आर्थिक चमत्कार" (economic miracle) कहा जाता है। इस अवधि में जर्मनी के सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) में औसतन 7.9 प्रतिषत की दर से बढ़ोतरी हुई जब कि आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (Organization for Economic Cooperation and Development; OECD) के देषों में औसतन वृद्धि 5.5 प्रतिषत थी। इस आर्थिक सफलता का श्रेय क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक संघ के नेताओं द्वारा अपनाए गए मुक्त व्यापार तथा मुक्त बाज़ार के नियमों के प्रति कटिबद्धता को दिया गया। तथापि यह मुक्त व्यापार प्रवृत्ति द्वितीय विष्व युद्ध से पहले की परम्परागत सांस्कृतिक विरासतों को अपनाने में भी प्रतिबिम्बित हुई। मूलतः इसका अर्थ था सामाजिक भाईचारा तथा सामुदायिक भावना के प्रति कटिबद्धता था जिसने जर्मन पूँजीवाद को विषिष्ट पहचान दी जिसे राईन पूँजीवाद (Rhine Capitalism) का नाम दिया गया। इसकी प्रमुख विषेषताएँ : प्रबंधन तथा मजदूरों के बीच सहयोग, सामाजिक सुरक्षा तथा रोजगार की गारन्टी के उच्च स्तर, तथा स्थानीय निकायों के अस्तित्व के लिए आवष्यक आर्थिक गतिविधियों की सुरक्षा थी। जर्मन पूँजीवाद की ये विषेषताएँ 1980 तथा 90 के दषकों में अमेरिका तथा ब्रिटेन में प्रचलित

एंग्लो–सेक्सन (Anglo-Saxon) पूँजीवाद से अत्यधिक भिन्न थी जो सामाजिक सुरक्षा तथा सहयोग के स्तर को कम महत्व देती है तथा बाज़ार अर्थव्यवस्था पर अधिक बल देती है।

क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक संघ (CDU) तथा कोन्राड एडनार (Konrad Adenauer) के पष्चिमोन्मुखी दृष्टिकोण (pro-West identity) ने जर्मन जनमत पर गहरा प्रभाव डाला और वह युद्धोपरान्त यूरोपीय संघटन का प्रबल समर्थक रहा। इस संघटन प्रक्रिया में जर्मन सरकारों को कई बार ऐसी रियायतें देने तथा समझौते करने पर मज़बूर होना पड़ा जो जनमत को स्वीकार्य नहीं थे परन्तु सरकार ने इस वृहत् उद्देष्य के संदर्भ में, यह आष्वासन देकर कि यूरोपीय संघटन के लिए ऐसी रियायतें जरूरी हैं अन्ततोगत्वा सार्वजनिक सहमति प्राप्त कर ली।

8.3.2 जर्मनी के समक्ष समस्याएँ

संघटन के प्रति जनसमर्थन मैस्टरिक संधि (Maastricht Treaty; TEU) से पूर्व काफी सकारात्मक था परन्तु बाद में यह उत्साह ठंडा पड़ गया। इस परिवर्तन में योगदान देने वाले कारणों में प्रमुख – मैस्टरिक संधि के प्रावधानों के अनुसार, जर्मन मुद्रा ड्यूषमार्क (Deutschmark) को त्यागना तथा एकल यूरोपीय मुद्रा (यूरो) (single European currency; EURO) को अपनाना था। वास्तव में ड्यूषमार्क यूरोप तथा समूचे संसार में युद्धोपरान्त जर्मनी के पुनः निर्माण तथा आर्थिक सफलता का प्रतीक था।

जनमत की राय थी कि एकल मुद्रा "ड्यूष मार्क के मुकाबले कम स्थायी होगी। यूरोपीय संघटन के लिए सार्वजनिक समर्थन में गिरावट का एक अन्य कारण एकल बाज़ार कार्यक्रम को अपनाने के बाद जर्मनी की कुछ एक प्रतिष्ठित तथा महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संस्थाओं पर ब्रस्सल्स द्वारा प्रहार किया जा रहा है। यह बात उन क्षेत्रों में कई प्रकार की प्रतिस्पर्धाएँ आरंभ करने में अभिव्यक्त हुई जो जर्मनी के लिए काफी संवेदनषील थी।

जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, यूरोपीय संघटन के प्रति जर्मन दृष्टिकोण युद्धोपरान्त पष्चिमोन्मुखी प्रवृति से अत्यधिक प्रभावित था। इसका एक महत्वपूर्ण आधार जर्मनी की फ्रांस के साथ सांझेदारी थी। कभी–कभार नीति भिन्नता के बावजूद सांझी कार्यनीतियों

को आकार देने तथा परस्पर सांझे हितों को मान्यता देने में फ्रांस तथा जर्मनी ने ही समुदाय की प्रारंभिक आर्थिक और राजनीतिक दिषा निर्धारित की। संघटन प्रक्रिया से संबंधित किसी भी प्रकार की पहल के लिए यह आवष्यक पूर्वापेक्षा बन गई। एडनॉर के लिए फ्रेन्च–जर्मन सांझेदारी एक सुरक्षित यूरोप की आधारषिला थी। परन्तु उसकी यह भी इच्छा थी कि संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ उसकी मित्रता भी बरकरार रहे क्योंकि उसका मानना था कि ये दोनों सम्बन्ध परस्पर अपवर्जक नहीं हैं।

कुछ सालों में इस मैत्री ने कई प्रकार की नीतियों तथा पहल को जन्म दिया। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण उपक्रम थेः तकनीकी क्षेत्र सम्बन्धी कार्यक्रम जिसमें शस्त्र सहयोग भी शामिल था, राजनीतिक एवं नीति कार्यक्रम जैसे 1979 में यूरोपीय मौद्रिक व्यवस्था (European Monetary System; EMS) लागू करना, 1985 में मीलान (Milan) में समुदाय को दोबारा शुरु करने की संयुक्त पहल, तथा मैस्टरिक षिखर सम्मेलन जिसका चरम बिन्दु एकल यूरोपीय अधिनियम (1986) था जिस पर 1991 में हस्ताक्षर हुए। तथापि दोनों देषों में यह मैत्री महत्वपूर्ण होने के बावजूद, हाल ही के वर्षों में इनके बीच बढ़ते हुए तनाव भी देखने को मिले हैं। जहाँ जर्मनी एक परिवद्धित तथा गहन संघटन का समर्थक रहा है, वहाँ फ्रांस यूरोपीय संघ के अन्तर्गत रक्षा प्रबंधों का विकास करने के प्रति शंकालु रहा है। जब 1989 में जर्मनी के पुनः एकीकरण (Re-unification) का मुद्दा यूरोप के मानचित्र पर उभरने लगा, तो फ्रांस की प्रारंभिक प्रतिक्रिया काफी सतर्क तथा इसके संभावित निहितार्थों के प्रति संदेहास्पद थी।

पुनःएकीकरण तथा 1991 की मैस्टरिक संधि जर्मनी के दृष्टिकोण से यूरोप के वृहत् संघटन के विकास में मील के पत्थर थे। पुनः एकीकरण ने जर्मनी की घरेलू समस्याओं में अत्यधिक वृद्धि कर दी क्योंकि इसके पूर्वी भाग के जर्जर मूल ढाँचों का विकास करने के लिए पष्चिमी भाग पर कर का बोझ बढ़ा दिया। दूसरी तरफ, शेष यूरोप, विषेषतः फ्रांस, को डर था कि एकीकृत जर्मनी को अब यूरोपीय संघ जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मंच की आवष्यकता अपेक्षाकृत कम हो सकती है।

उधर मैस्टरिक की संधि के अनुमोदन ने जर्मन सरकार के लिए एक अन्य समस्या पैदा कर दी – जर्मनी की अधिकतर जनता मौद्रिक संघ (Monetary Union), जो मैस्टरिक संधि का भाग थी, के खिलाफ थी। एकीकरण से पूर्व पूर्वी जर्मनी के साथ मौद्रिक संघ का उच्चतर कर तथा उच्चतर ब्याज के परिणामों का अनुभव जर्मनी की जनता के मन में अभी भी ताजा था। ऐसी शंका जताई जा रही थी कि यूरोप की अन्य मुद्राओं के साथ एकीकरण के प्रयोग का जर्मन अर्थव्यवस्था, विषेषकर रोजगार, पर इसका संभावित प्रभाव भी कहीं वैसा ही न हो।

8.3.3 यूरोपीय संघ को सषक्त करना

जर्मनी की जनता में अलोकप्रिय होने के बावजूद हेल्मट कोल (Helmut Kohl) की सरकार यूरोपीय मौद्रिक संघ (European Monitary Union; EMU) को समर्थन देती रही। विडम्बना यह थी कि घरेलू विरोध के बावजूद यूरोपीय संघ के स्तर पर होने वाले समझौतों ने कोल के हाथ इतने मज़बूत कर दिए कि वह यूरोपीय मौद्रिक संघ से संबंधित सभी विवरणों पर जर्मनी की बात मनवाने में सफल रहा। यूरोपीय संघ के पूर्वी दिषा में प्रसार करने के सवाल पर भी कोल की बात मान ली गई। जर्मनी के लिए यह प्रसार अनिवार्यतः सुरक्षा का प्रष्न था। पुनः एकीकरण ने जर्मनी को एक बार फिर केन्द्रीय यूरोपीय राज्य बना दिया था जिसकी सीमाएँ पोलैण्ड तथा चेकोस्लोवाकिया के साथ जा कर मिल गई थी। क्योंकि किसी भी तरह की क्षेत्रीय अस्थिरता जर्मनी को प्रतिकूल प्रभावित रूप से कर सकती थी, अतः जर्मनी के सीमावर्ती देषों की यूरोपीय संघ की सदस्यता जर्मनी की स्थिरता की गारंटी मानी गई। ऐसे प्रसार से जर्मनी को आर्थिक लाभ होने की भी आषा थी क्योंकि जर्मन कम्पनियाँ तथा बैंक उन क्षेत्रों में प्रमुख निवेषकों की परम्परागत भूमिका दोबारा आरंभ कर सकते थे।

यूरोपीय मौद्रिक संघ के समझौतों में कोल की सफलता तथा यूरोपीय संघ योजना का पूर्व यूरोप की दिषा में प्रसार – इन दो घटनाओं ने कोल को यूरोप का शक्तिषाली नेता बना दिया। तथापि बढ़ती बेकारी और नगन्य आर्थिक वृद्धि ने जर्मन अर्थव्यवस्था में संकट पैदा कर दिया। सितम्बर 1998 में गर्हार्ड सचरोडर (Gerhard Schroder) के नेतृत्व में सोषल

डेमोक्रेटिक संघ सत्ता में आ गई जिसने जर्मनी की आर्थिक समस्याओं के निवारण के लिए एक लम्बी प्रक्रिया की शुरुआत की। इसमें समकालीन ग्लोबल पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के अनुरूप जर्मनी का आधुनिकीकरण प्रमुख था। इसके लिए आर्थिक सुधारों के ऐसे कार्यक्रम की परिकल्पना की गई जिसमें उच्चतर कर का बोझ न हो, जो कर कम करे तथा राष्ट्रीय आय में सार्वजनिक व्यय का अनुपात स्वीकार्य सीमाओं के अंदर ही रहे। यह दृष्टिकोण जर्मनी द्वारा पिछले 50 सालों में अपनाई गई नीति से उल्टा था।

एक सदस्य–राज्य के रूप में जर्मनी यूरोपीय संघटन का सबसे शक्तिषाली समर्थक रहा है। पष्चिमी जर्मनी के नेताओं का मानना था कि जर्मनी का सफल पुनर्निर्माण तथा यूरोप की सुरक्षा इसके यूरोपीय आन्दोलन में भागीदारी के साथ अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। तथापि पुनः एकीकरण तथा जर्मनी की समाजवादी बाज़ार अर्थव्यवस्था के आधुनिक ग्लोबल पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के साथ तालमेल के विरोधाभासों ने कई तरह के सामाजिक एवं राजनीतिक असंतोष पैदा कर दिए हैं। वर्तमान जर्मन सरकार इस बात से इंकार नहीं करती कि उनकी समस्याओं के लिए यूरोपीय संघ काफी हद तक ज़िम्मेदार है। परिणामस्वरूप जर्मनी के अंदर यूरोपीय संघ की लोकप्रियता, विषेषतः मैस्टरिक संधि के समझौते के बाद, काफी कम हो गई है।

8.4 फ्रांस तथा यूरोपीय संघ

यूरोप में संघटन (एकीकरण) प्रक्रिया में केन्द्रीय भूमिका निभाने वालों में फ्रांस का योगदान महत्वपूर्ण है। जैसे कि पिछले पृष्ठों में चर्चा की जा चुकी है, पिछले 200 सालों के यूरोपीय इतिहास में कलह तथा फूट का सबसे बड़ा कारण फ्रांस तथा जर्मनी की प्रतिस्पर्धा थी। यूरोपीय सहयोग के लिए फ्रांस की तीव्र इच्छा के पीछे युद्ध के बाद पुनः उभरते हुए जर्मनी के विरुद्ध सुरक्षा की भावना प्रमुख थी। फ्रांस की जर्मनी से सुरक्षा तथा युद्ध विध्वंस यूरोप के नवनिर्माण में जर्मनी के सामान्य, पुनर्निर्माण तथा सहयोग के ढाँचों में बाधना – कुछ ऐसे मुद्दे थे जिन्होंने फ्रांस को – विषिष्ट तथा जन साधारण दोनों स्तरों पर – युद्धोपरान्त संघटन (एकीकरण) की प्रक्रिया के साथ जोड़े रखा।

8.4.1 फ्रांस द्वारा पहल

द्वितीय विष्व युद्ध फ्रांस के लिए बहुत ही कटु अनुभव था परन्तु फिर भी यह जर्मनी की तरह अत्यधिक अभिभूत नहीं हुआ। फ्रांस की हार तथा फ्रांस की भूमि पर जर्मन कब्जा फ्रांस के राष्ट्रीय गौरव को जबरदस्त धक्का था जिसने युद्धोपरान्त वर्षों में नाज़ी सेना का विरोध करने वाले तथा उनके साथ सहयोग करने वाले दो गुटों के बीच आंतरिक विवाद पैदा कर दिया। युद्ध के बाद 13 साल तक फ्रांस की राजनीति इस वैचारिक विभाजन तथा अत्यधिक विखण्डन का षिकार रही। फ्रांस को एक स्थायी तथा शक्तिषाली नेतृत्व जनरल चार्ल्स डि गाल (General Charles de Gaulle) के रूप में मिला जिसने 1958 में नए संविधान के अन्तर्गत सत्ता संभाली।

डि गाल ने फ्रांस को एक ऐसी अस्मिता तथा दिषा–निर्देष दिया जिसने देष पर अमिट छाप छोड़ी तथा उसके बाद आने वाली सरकारें जिसका अनुसरण करती रहीं। यूरोपीय समुदाय में फ्रांस को प्रमुख सत्ता के रूप में स्थान दिलाने का श्रेय भी डि गाल को ही जाता है हालाँकि वह अपने चौथे गणराज्य के पूर्व पदाधिकारियों द्वारा आरंभ किए गए आर्थिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को भी चलाता रहा।

समकालीन यूरोप तथा विष्व के प्रति फ्रांस के दृष्टिकोण का निर्माण करने में जो तत्व अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है, वह है राष्ट्रवाद। आधुनिक युग में फ्रांस उन कुछ गिने चुने देषों में से था जिसमें राष्ट्र तथा राज्य दोनों का समावेष था तथा यह यूरोप के अन्य प्रमुख राष्ट्रों, विषेषतः जर्मनी और ब्रिटेन, के संदर्भ में अपनी राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति अति संवेदनषील रहा है। डि गाल जैसे फ्रांस के नेताओं की इच्छा थी कि द्वितीय विष्व युद्ध में हुई बदनामी के बावजूद यूरोपीय तथा विष्व स्तर पर फ्रांस एक बार फिर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका आरंभ करे। साथ ही वह इस बारे में भी पूरी तरह सतर्क था कि किसी भी कीमत पर भावी युद्ध को रोका जाना चाहिए। यूरोप तथा फ्रांस के आर्थिक पुर्नवास के लिए जर्मनी के साथ सुलह इस प्रक्रिया की महत्वपूर्ण पूर्वापेक्षा थी।

संघटन के प्रष्न पर फ्रांस का जनमत सामान्यतया सकारात्मक था तथा यह विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा सुझाए गए विचारों तथा दिषा निदेर्षों का अनुसरण करता रहा।

तथापि यह मुद्दा पूर्ण रूप से विवादहीन नहीं था। फ्रांस के साम्यवादियों ने संघटन प्रक्रिया में पूँजीवादी षड़यन्त्र देखा। हालाँकि समाजवादी तथा क्रिष्चियन डेमोक्रेटिक संघ ने संघटन का समर्थन किया तथा मतदाताओं ने इनके नेतृत्व का अनुसरण भी किया। काफी सालों तक यूरोपीय संघटन के लिए समर्थन प्रायः सकारात्मक रहा, हालाँकि परिस्थिति विषेष में इसके प्रतिषत में उतार–चढ़ाव आता रहा। उदाहरण के लिए, 1960 के दषक में यह समर्थन न्यनूतम था जब यूरोपीय संघ की मन्त्रि परिषद् की शक्तियों को लेकर डि गाल का फ्रांस के सांझेदारों के साथ झगड़ा हो गया तथा फ्रांस ने 9 महीने तक यूरोपीय समुदाय की संस्थाओं का बहिष्कार कर दिया। इसके विपरीत 1970 में यह समर्थन अपने चरम बिन्दु पर था जब यूरोपीय समुदाय की गतिविधियों में फ्रांस महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था।

यूरोपीय संघ की संस्थाओं, नीतियों तथा प्रक्रियाओं के निर्माण में फ्रांस की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। विभिन्न फ्रेन्च सरकारों का एक ही उद्देष्य रहा कि यूरोपीय नीतियों तथा संस्थाओं का विकास फ्रांस की प्राथमिकताओं के अनुरूप हो। इस संदर्भ में फ्रांस का योगदान आसानी से पहचाना जा सकता है। यूरोपीय कोयला तथा इस्पात समुदाय का नाम फ्रांस के विदेषमंत्री रोबर्ट षमन के नाम पर रखा गया जबकि इसकी योजना अप्रैल 1951 में जीन मोन्नट ने बनाई थी। रोम की संधि द्वारा स्थापित यूरोपीय आर्थिक समुदाय के निर्माण में भी फ्रांस की पहल की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इस तरह यूरोपीय आर्थिक समुदाय के प्रथम प्रसार का निर्णय भी 1969 में फ्रांस के राष्ट्रपति जार्ज पोम्पेदयु (Georges Pompidou) की अध्यक्षता में हुए हेग सम्मेलन में लिया गया। 1978 में फ्रांस के राष्ट्रपति गिस्कार्ड एस्टैंग (Giscard d'Estaing) ने यूरोपीय समुदाय के अध्यक्ष राय जैन्किन्स (Roy Jenkins) तथा जर्मन चांसलर हेलमेट शमित (Helmut Schmidt) के साथ मिलकर यूरोपीय मौद्रिक व्यवस्था की स्थापना की। फ्रांस के राष्ट्रपति मित्रों ने उस समय के यूरोपीय समुदाय के अध्यक्ष जैक्स डेलोरस (Jacques Delors) (जो स्वयं फ्रेन्च थे) के साथ मिलकर एकल यूरोपीय अधिनियम तथा यूरोपीय संघ संधि को आकार देने तथा आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

यदि फ्रांस की उपरोक्त उपलब्धियाँ थी तो साथ ही कुछ असफलताएँ भी देखने को मिली। 1954 में यूरोप के लिए सांझी विदेष तथा रक्षा नीति के निर्माण के लिए यूरोपीय रक्षा समुदाय (European Defence Community; EDC) का प्रस्ताव असफल हो गया। इसी तरह 1962 में डि गाल का विदेष नीति समन्वय प्रस्ताव भी सफल नहीं हो सका। डि गाल ने यूरोपीय आर्थिक समुदाय का और अधिक प्रसार करके ब्रिटेन के समुदाय में प्रवेष पर 1960 में दो बार वीटो (Veto) कर दिया। इसी तरह पोम्पेन्डयु तथा डिस्टेन की सरकारें यूरोपीय समुदाय के निर्देषों को फ्रेन्च कानूनों में परिवर्तित करने तथा यूरोपीय न्यायालय (European Court of Justice; ECJ) के फैसलों को लागू करने में ढ़ीलापन दिखाती रहीं। यहाँ तक कि 1980 में प्रतिस्पर्धा की नीति को लेकर भी फ्रांस ने विवाद खड़ा कर दिया जिसके चलते यूरोपीय आयोग के अध्यक्ष जैक्स डेलोरस (Jacques Delors) को त्यागपत्र देने की धमकी देनी पड़ी।

8.4.2 यूरोपीय संघ में फ्रांस की भूमिका

यूरोपीय संघटन (एकीकरण) के संदर्भ में फ्रांस की भूमिका मिली जुली रही है। जहाँ कुछ फ्रेन्च नेताओं ने यूरोपीय संघ की महत्वपूर्ण संस्थाओं तथा नीतियों के विकास में सकारात्मक योगदान दिया, वहाँ कुछ अन्य ने इसमें कई तरह की समस्याएँ तथा अड़चनें पैदा की। इस विडम्बना का आधार द्वितीय विष्व युद्ध के बाद फ्रांस के उद्देष्य थे जिनमें एक तरफ फ्रांस यूरोप तथा विष्व स्तर पर अपनी स्थिति मज़बूत करना चाहता था वहाँ दूसरी तरफ यूरोप के सहयोगी ढाँचे (जिसमें छोटे बड़े सभी पड़ोसी राज्य शामिल थे) के अन्तर्गत अपने राष्ट्रीय हितों को भी पूरा करना चाहता था। आग्रही राष्ट्रवाद के इस दृष्टिकोण तथा धीरे–धीरे राष्ट्रीय प्रभुसत्ता पर सीमाएँ लगाने के यूरोपीय समुदाय के दृष्टिकोण में तालमेल बिठाना इतना आसान नहीं था। उदाहरण के लिए, डि गाल जहाँ यूरोपीय समुदाय के आर्थिक पक्ष में फ्रांस की भागेदारी के लिए उत्सुक थे, वहाँ उन्होंने संघटन के राजनीति परिणामों का विरोध किया।

जैसा कि ऊपर चर्चा की जा चुकी है, यूरोपीय संघ का नीति निर्माण ढाँचा अधिराष्ट्रीय तथा अन्तरसरकारी तत्वों का जटिल मिश्रण है जो सदस्य–राज्यों की राष्ट्रीय नीति तथा

नीति निर्माण पर विविध प्रभाव डालता है। प्रतिस्पर्धा नीति, एकल बाज़ार विधि तथा औद्योगिक नीति के क्षेत्रों में जहाँ राष्ट्रीय कानूनों को यूरोपीय संघ के नियंत्रक ढाँचे के अनुसार बनाना होता है, वहाँ विदेषी मामले, सुरक्षा नीति एवं ऐसे अन्य मामलों में यूरोपीय संघ का ढाँचा अन्तरसरकारी है। नीतिनिर्माण सम्बन्धी मामलों में फ्रांस तथा अन्य यूरोपीय नीति निर्माताओं में काफी वाद–विवाद, समझौते तथा सहयोग देखने को मिलता है। अन्तिम नीतियाँ यूरोपीय, अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय हितों का समिश्रण होती हैं।

1960 तथा 1970 के दषकों में यूरोपीय संघ की आरंभिक अवस्था में फ्रांस ने इसे प्रभावषाली नेतृत्व एवं योगदान प्रदान किया। इससे फ्रांस को अपने राष्ट्रीय उद्देष्य जैसे औद्योगिक आधुनिकीकरण तथा यूरोपीय संघ ढाँचे के अर्न्तगत कृषि क्षेत्र का वैज्ञानिक संगठन को आगे बढ़ाने का अवसर भी मिला। परन्तु धीरे–धीरे यूरोपीय संघ के आकार तथा कार्य क्षेत्र में बढ़ोतरी होने से संस्थागत तथा नीति–निर्माण का एक ऐसा ढाँचा विकसित होने लगा जिसमें किसी एक देष विषेष का प्रभाव तथा नियंत्रण ढीला पड़ने लगा। परिणामस्वरूप यूरोपीय संघ के कार्यक्रमों को अपने हितो ंके अनुकूल ढालने में फ्रांस की सरकार को कठिनाई होने लगी।

यूरोपीय संघटन के लिए फ्रांस के जोष में कमी का उदाहरण मैस्टरिक संधि पर हुए फ्रांस के जनमत संग्रह में देखने को मिला जो केवल 51 : 49 के अनुपात में स्वीकृत हुआ। फ्रांस की जनता को आषंका थी कि संघटन के परिणामस्वरूप घरेलू स्तर पर बेकारी दर में वृद्धि होगी तथा यह सामाजिक सुरक्षा जैसी सुविधाओं को भी अपेक्षाकृत कमज़ोर करेगी। इसके अतिरिक्त अर्थव्यवस्था के सुरक्षित क्षेत्रों को बाज़ार अर्थव्यवस्था के लिए खोल देने से उत्पन्न होने वाले प्रतिकूल प्रभावों को भी शंका के दृष्टिकोण से देखा गया। इन्हें फ्रांस की परम्परागत जीवन शैली में ब्रसल्लस का अनावष्यक हस्तक्षेप माना गया।

यूरोपीय संघ के इन प्रतिकूल परिणामों की आषंका ने आम लोगों को इसमें रूचि लेने के लिए प्रेरित किया। कई विषयों पर फ्रांस तथा यूरोपीय संघ में मतभेद था तथा फ्रांस की कई सरकारों को अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के लिए यूरोपीय संघ के प्रति कठोर रूख अपनाना पड़ा। पूँजीवाद के वैष्वीकरण के संदर्भ में राष्ट्र–राज्यों की प्रभुसत्ता में कमी का

मुद्दा प्रस्तावित यूरोपीय संघ साविधांनिक संधि पर जनमत संग्रह के समय काफी मुखर हो कर सामने आया। इस संधि का उद्देष्य पुरानी चार मूल संधियों को एक नए एकल, संक्षिप्त तथा सरल प्रापत्र में परिवर्तित करना था। मई 2005 में हुए जनमत संग्रह में फ्रांस की जनता ने इस यूरोपीय संघ साविधांनिक संधि को 55 : 45 के अनुपात से रद्द कर दिया। फ्रांस के साथ–साथ नीदरलैण्ड (जून 2005) के नकारात्मक निर्णय ने संधि और यूरोपीय संघटन के भावी आकार को थोड़ा अस्त–व्यस्त कर दिया।

मई 2005 के जनमत संग्रह में फ्रांस का फैसला काफी विचित्र है क्योंकि यह स्पष्ट करता है कि फ्रांस तथा यूरोपीय संघ का सहयोग 1950 तथा 1960 के दषकों से कितना दूर जा चुका है। वर्तमान आर्थिक संकट, विषेषतः बेकारी की बढ़ती दर, के संदर्भ में यूरोपीय समुदाय/यूरोपीय संघ के क्षेत्रीय दृष्टिकोण तथा पूँजीवाद के वैष्वीकरण के बीच संतुलन लाना फ्रांस के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। इसका हल ही बहुत हद तक इक्कीसवीं शताब्दी में यूरोपीय संघ के संघटन/एकीकरण का आकार निष्चित करेगा।

8.5 ब्रिटेन तथा यूरोपीय संघ

यूरोपीय संघटन आन्दोलन के प्रति ब्रिटिष दृष्टिकोण एवं सहभागिता का इतिहास उतार–चढ़ाव से भरा हुआ है। अमेरिका तथा रूस (जो जर्मनी तथा जापान को हराने वाले देष थे) की तरह स्वयं को एक "विष्व शक्ति" (Global Power) मानते हुए ब्रिटेन ने अपनी विदेष नीति के संदर्भ में यूरोप को विष्व के तीन प्रभावी परिमण्डल क्षेत्रों में से एक माना है। इस व्यवस्था के दो अन्य तथा यूरोप से उच्च प्रभावी परिमण्डल (Circles) – अमेरिका के साथ "विषेष रिष्ता", तथा उत्तर–साम्राज्यवादी काल में राष्ट्रमंडल देषों का उभरता समूह थे।

अतः इसमें कोई शक नहीं कि यूरोप के गहरे मतभेदों में सामंजस्य लाने के लिए जब यूरोपीय एकता का नया तथा अनोखा आन्दोलन आरंभ हुआ – जिसकी अभिव्यक्ति 1952 में यूरोपीय कोयला तथा इस्पात समुदाय तथा 1958 में यूरोपीय आर्थिक समुदाय में हुई – तो ब्रिटेन की विभिन्न सरकारों (लेबर तथा कन्जर्वेटिव दोनों) ने इसके साथ जुड़ने से

इंकार कर दिया। लंदन ने इसे "पष्चिमी यूरोप का अधिराष्ट्रीय संघटन प्रयोग" (supranational integrative experiments in Western Europe) की संज्ञा दी। उस समय ब्रिटेन की नीति इसका समर्थन करने परन्तु इससे दूर तथा अलग रहने की थी। ब्रिटेन की रूचि मुख्यतः परम्परागत अन्तरसरकारी संस्थाओं में भाग लेने तथा उन्हें सही आकार देने में थी जैसे उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (नाटो) (North Atlantic Treaty Organisation; NATO), आर्थिक सहयोग और विकास संगठन जो अनिवार्यतः यूरोपीय न होकर परा–अटलांटिक (trans-Atlantic) थी।

तथापि उपरोक्त तीन परिमण्डलों (संयुक्त राज्य अमेरिका, राष्ट्रमंडल तथा यूरोप) में अलग–अलग स्वायत्त भूमिका निभाने के लिए ब्रिटेन के उद्देष्य 1950 के अंतिम वर्षों में चकनाचूर हो गए। 1956 के स्वेज नहर के संकट ने विष्व स्तर पर ब्रिटेन के सैनिक तथा राजनीतिक प्रभाव के पतन को उजागर कर दिया। दूसरी तरफ, इसी अवधि में ब्रिटिष व्यापार का राष्ट्रमंडल देषों से यूरोप की तरफ रूख ने उत्तर–साम्राज्यवादी प्राथमिकताओं के घटते महत्व को स्पष्ट कर दिया जो दषकों से चली आ रही ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्रीय वरीयताओं का आधार थी।

8.5.1 ब्रिटेन के दृष्टिकोण में परिवर्तन

अपनी मनमर्जी करते हुए विष्वस्तर पर राजनीतिक दृष्टिकोण से नगण्य शक्ति बन जाने के डर से तथा यूरोपीय आर्थिक समुदाय की कस्टम यूनियन के सांझे विदेष शुल्क के परिणामस्वरूप यूरोप के साथ विदेष व्यापार (जिस पर इंग्लैण्ड का आर्थिक अस्तित्व निर्भर था) खोए जाने के डर से ब्रिटेन ने अपनी कार्यनीति में उग्रवादी परिवर्तन किया तथा 1961 में यूरोपीय समुदाय की सदस्यता के लिए आवेदन पत्र दिया। परन्तु यूरोपीय समुदाय की सदस्यता प्राप्त करना इतना आसान नहीं था क्योंकि ब्रिटेन के अमेरिका के साथ शक्तिषाली राजनीतिक तथा सैनिक (विषेषतः आणविक) सम्बन्धों ने डि गाल जैसे अत्यधिक राष्ट्रवादी तथा अमेरिका विरोधी नेताओं को ब्रिटेन की यूरोप के प्रति नेकनीयता के बारे में शंकालु बना दिया था। ब्रिटेन की सदस्यता पर फ्रांस द्वारा दो बार वीटो का प्रयोग करने के परिणामस्वरूप ब्रिटेन को 12 साल तक इंतजार करना पड़ा। 1969 में डि गाल के

फ्रांस के राजनीतिक मंच से विदा लेने के बाद ही फ्रांस ने अपना वीटो वापस लिया। इसके बाद यूरोपीय आर्थिक समुदाय के छह सदस्यों तथा ब्रिटेन में चली लम्बी वार्ताओं तथा समझौतों के परिणामस्वरूप जनवरी 1973 में ब्रिटेन यूरोपीय समुदाय का सदस्य बन सका।

यूरोपीय समुदाय की सदस्यता प्राप्त करने के पीछे ब्रिटेन के उद्देष्य आर्थिक तथा राजनीतिक थे। ब्रिटेन का आर्थिक निष्पादन, विषेषतः 1950 तथा 1960 के दषकों में, यूरोपीय आर्थिक समुदाय के सदस्य–राज्यों की तुलना में काफी नकारात्मक था। ब्रिटेन के लिए सबसे उत्साहवर्धक तथ्य यह था कि यूरोपीय आर्थिक समुदाय के सदस्य–राज्यों के आर्थिक विकास की दर समुदाय के निर्माण के बाद काफी अधिक बढ़ गई। अतः ब्रिटिष नेताओं का मानना था कि आर्थिक स्तर पर विकास की कम दर में वृद्धि लाने तथा औद्योगिक स्थिरता प्राप्त करने का सबसे बढ़िया इलाज यूरोपीय आर्थिक समुदाय का सदस्य बनना है।

राजनीतिक दृष्टिकोण से भी ऐसी आषा की गई कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी यूरोप की संगठित टीम के साथ रह कर ब्रिटेन अपनी आवाज बेहतर बुलन्द कर सकता है तथा अपेक्षाकृत लाभदायक भूमिका निभा सकता है। एक ऐसा विष्व जिसमें दो महाषक्तियाँ तथा अपेक्षाकृत निम्न स्तर पर जापान तथा चीन हावी हैं, यूरोप के विभिन्न देषों (जो क्षेत्रफल में छोटे हैं तथा जहाँ प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं) की गिनती केवल संयुक्त यूरोपीय इकाई के रूप में ही हो सकती है।

वास्तविक स्तर पर यूरोपीय आर्थिक समुदाय के माध्यम से ब्रिटेन की तुरंत आर्थिक लाभ की आषा पूरी नही हो सकी। दुर्भाग्य से 1973 का समय, जब ब्रिटेन ने यूरोपीय आर्थिक समुदाय में प्रवेष किया, यूरोप के लिए आर्थिक दृष्टिकोण से द्वितीय विष्व युद्ध के बाद का सबसे नकारात्मक काल था। 1973 के तेल संकट ने पष्चिमी देषों की सभी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को धाराषाही कर दिया और वे आर्थिक मंदी के दौर में चली गई। वे सभी असाधारण विकास दरें, जिन्होंने यूरोपीय आर्थिक समुदाय के मूल सदस्य देषों के लिए

1960 के दषक में अभूतपूर्व समृद्धि का दौर पैदा किया था, ब्रिटेन की सदस्यता के एक साल के भीतर ही लुप्त प्रायः हो गई।

ब्रिटेन की तुरन्त आर्थिक समृद्धि न प्राप्त कर पाने की यह विफलता 1970 तथा 1980 के दषकों के प्रारंभिक वर्षों के आर्थिक प्रदर्षन में देखने को मिली। मुद्रा स्फिति की उच्च दर, बेकारी, निरंतर प्रतिकूल अदायगी संतुलन (विषेषतः यूरोपीय समुदाय के संदर्भ में), स्थिर औद्योगिक उत्पादन, खाद्यान्नों की कीमत में अत्यधिक बढ़ोतरी, ब्रिटेन में यूरोपीय पूँजी निवेष करवा पाने की असमर्थता – ब्रिटेन के लिए इस निराषाजनक चित्रण के कुछ महत्वपूर्ण पहलू थे।

यूरोपीय आर्थिक समुदाय द्वारा स्थापित सांझी नीतियों के अनुरूप किए जाने वाले ढाँचागत परिवर्तनों से संबंधित समस्याओं ने ब्रिटेन तथा यूरोपीय समुदाय देषों के बीच रिष्तों को बद से बदतर कर दिया। परिणामस्वरूप, ब्रिटेन तथा यूरोपीय सदस्यों के बीच सांझी नीतियों को लेकर कई क्षेत्रों में विवाद पैदा हो गया। यूरोपीय आर्थिक समुदाय के कुल बजट का अधिकांष भाग इसकी कृषि नीति – जिसे सांझी कृषि नीति का नाम दिया गया तथा जो समुदाय की सबसे अधिक विकसित नीति थी – पर खर्च होता था। इस मुद्दे ने ब्रिटेन तथा सदस्य–राज्यों के बीच काफी कड़वाहट पैदा की क्योंकि ब्रिटेन का कृषि क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा होने के कारण इसे इस कृषि समर्थन व्यवस्था से कोई विषेष लाभ नहीं हो रहा था। परिणामस्वरूप, जैसे ही दिसम्बर 1977 में ब्रिटेन की यूरोपीय समुदाय से संबंधित संक्रमण प्रबंध की अवधि समाप्त हुई, यूरोपीय समुदाय के बजट में ब्रिटेन के योगदान का अंष असहनीय सीमा तक पहुँच गया। मई 1979 में जब ब्रिटेन में माग्रेरेट थैचर ने प्रधानमंत्री का पद संभाला तो 1980 के दषक के प्रारंभिक वर्षों में ब्रिटेन तथा यूरोपीय समुदाय के सदस्यों के बीच ठन गई।

पिछले तीस सालों में यूरोपीय संघ की सदस्यता के परिणामस्वरूप धीरे–धीरे ब्रिटेन का यूरोप के साथ अत्यधिक आर्थिक एकीकरण हो गया है। ब्रिटेन के विदेष व्यापार का सबसे बड़ा हिस्सा अब यूरोप के साथ है। इसी प्रकार ब्रिटेन में विदेषी प्रत्यक्ष पूँजी निवेष (overseas direct investments; ODI) का सबसे बड़ा अंष भी यूरोप से ही आ रहा है।

यूरोपीय समुदाय के अन्तर्गत नीति निर्माण प्रक्रिया में भी ब्रिटेन की सक्रिय और कई मामलों में प्रभावषाली भूमिका रही है। ब्रिटिष चैनल सुरंग के खुलने के पष्चात् ब्रिटेन की यूरोप के साथ भौगोलिक पृथकता भी समाप्त हो गई है। वास्तव में पिछले तीस सालों की अपेक्षा ब्रिटेन अब अत्यधिक यूरोपीय हो गया है।

उपरोक्त सम्पूर्ण अवधि में ब्रिटेन यूरोपीय समुदाय का एक अजीबोगरीब सदस्य रहा है। जैसा उपरोक्त विष्लेषण से स्पष्ट है ब्रिटेन तथा अन्य यूरोपीय सदस्यों के बीच सबसे बड़ी समस्या सुसंगति की है क्योंकि ब्रिटेन यूरोपीय समुदाय के लोकाचार तथा परम्पराओं के साथ मेलमिलाप के लिए संघर्ष करता रहा है। समस्त विष्व के लिए यूरोपीय समुदाय की नीति निर्माण प्रक्रिया में ब्रिटेन की तस्वीर एक अकेले व्यक्ति की रही है। जहाँ राजनीतिक/सरकारी स्तर पर कई तरह की विभिन्नताएँ, मतभेद तथा विभाजन रहे, वहीं आम जनता ने भी यूरोपीय समुदाय को हिचकिचाहट के साथ अपनी स्वीकृति दी, यह मानते हुए कि इसके अलावा उनके पास और कोई विकल्प नहीं है।

8.5.2 यूरोपीय संघ में ब्रिटेन की स्थिति

यूरोपीय संघटन प्रक्रिया में ब्रिटेन का एक अनैच्छिक सहयोगी के रूप में अध्ययन करते हुए एक ऐसे प्रमुख यूरोपीय राष्ट्र (जो कभी एक विष्व शक्ति था) की तस्वीर दिखाई देती है जिसकी नस्ल, इतिहास, संस्कृति सभी मूलतः यूरोप द्वारा साकार रूप में आई परन्तु जो यूरोप के साथ मिलने से कतराता रहा है। यह ऐसा राष्ट्र है जो अभी भी अपनी विषिष्ट ब्रिटिष अस्मिता पर गर्व करता है तथा अपनी विषिष्ट परम्पराओं, जीवनयापन तथा अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों, (विषेषतः अमेरिका के साथ), की दुहाई देता रहा है। यूरोपीय सदस्य देषों की कीमत पर अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का रोब दिखाने की प्रवृत्ति 2003 में इराक में गल्फ संकट के दौरान स्पष्ट देखने को मिली। संयुक्त राष्ट्र घोषणा तथा अन्तर्राष्ट्रीय कानून संहिता को ताक पर रखकर ब्रिटेन अमेरिका के साथ मिलकर इराक पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो गया। इन परिस्थितियों में यूरोपीय संघ की सांझी विदेष तथा सुरक्षा नीति छिन्न–भिन्न हो गई क्योंकि इस मुद्दे पर इसमें विभाजन हो गया। सांझी विदेष तथा सुरक्षा नीति के प्रति कटिबद्धता के बावजूद विष्वस्तरीय सम्बन्धों में ब्रिटेन अपनी

स्वायत्त भूमिका कायम रखना चाहता है। इराक का मुद्दा इसका नवीनतम उदाहरण है। वह अमेरिका के साथ सम्बन्धों की पवित्रता सारे संसार को दिखाना चाहता है।

जहाँ तक यूरोपीय संघ के अन्तर्गत इसकी स्थिति का सम्बन्ध है, राजनीतिक क्षेत्रों तथा टोनी ब्लेयर की सरकार का यह मानना रहा है कि ब्रिटेन के पास यूरोपीय संघ में सम्मिलित होने के अलावा और कोई चारा नहीं है। परन्तु ब्रिटेन के अंदर कुछ अन्य विरोधी स्वर भी हैं जिनका तर्क है कि ब्रिटेन के पास अटलान्टिक का विकल्प अभी खुला हुआ है। ब्रिटेन यदि चाहे तो यूरोपीय संघ के साथ केवल आर्थिक समझौते, विषेषतः व्यापारिक, रखते हुए इसकी सदस्यता से त्यागपत्र दे सकता है तथा यूरोपीय संघ से भी अधिक गतिषील संस्था उत्तरी अमेरिका मुक्त व्यापार क्षेत्र (नाफ्टा) (North American Free Trade Area; NAFTA) के साथ जुड़ सकता है। यह भी तर्क दिया जाता है कि नस्ल, इतिहास, परम्पराओं, संस्थाओं तथा संस्कृति के दृष्टिकोण से ब्रिटेन, यूरोपीय देशों की अपेक्षा कनाडा और अमेरिका के अधिक नजदीक है। इसी तरह आर्थिक दृष्टिकोण से भी अमेरिका तथा कनाडा के साथ इसके व्यापक व्यापारिक सम्बन्ध हैं। अतः नाफ्टा का विकल्प यूरोपीय संघ से बेहतर है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि यूरोपीय संघ के अन्य सदस्य देषों के विपरीत ब्रिटेन की स्थिति तथा भूमिका पिछले 30 सालों से चर्चा का विषय बनी हुई है। ब्रिटेन बनाम यूरोपीय संघ के सभी सदस्य देषों के दृष्टिकोण में अभी भी सतर्कता का पुट है। विडम्बना यह है कि यूरोपीय संघ के केन्द्रीय तथा पूर्वी यूरोप की तरफ प्रसार के परिणामस्वरूप एक स्वस्थ, एकीकृत एकजुट यूरोपीय अधिराज्य की धारणा पृष्ठभूमि में जा रही है। हालाँकि ब्रिटेन के लिए यह अच्छी खबर हो सकती है परन्तु अब ब्रिटेन का सामना एक बहु–गतिषील यूरोप से है और ब्रिटेन को यह निर्णय लेना है कि क्या वह इसी एकीकृत तथा केन्द्रीयकृत यूरोप तथा यूरोपीय संघ द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों का भाग बनना चाहता है। इसका दूसरा विकल्प एक पराधीन यूरोप है जिसमें इक्कीसवीं शताब्दी में यूरोप द्वारा अपनाए तथा अनुसरण किए जाने वाले रास्ते की दिषा में ब्रिटेन की भूमिका हाषिये (margin) पर रहेगी। इस संदर्भ में इराक का युद्ध एक उत्प्रेरक (catalyst) हो सकता है जो यह निर्णय करेगा कि ब्रिटेन कौन सा विकल्प चुनता है।

8.6 सारांष

सांझे हितों का पुट होने के बावजूद द्वितीय विष्व युद्ध के उपरान्त यूरोप के एकीकरण के मुद्दे पर विभिन्न सदस्य–राज्यों के विचार भिन्न रहे हैं। जर्मनी के लिए यूरोपीय संघटन ने उसके लिए यूरोप एवं सारे विष्व में राजनीतिक पुनर्वास का आधार प्रस्तुत किया तथा साथ ही सामाजिक–आर्थिक पुनर्निर्माण का रास्ता स्पष्ट किया। फ्रांस के लिए संघटन/एकीकरण प्रक्रिया जर्मनी के साथ तालमेल, मेलमिलाप तथा सामंजस्य का साधन था तथा यूरोप के अंदर तथा विष्व स्तर पर फ्रेन्च शक्ति तथा प्रतिष्ठा की पुनर्स्थापना थी। ब्रिटेन ने आरंभ में यूरोपीय संघटन प्रक्रिया को एक अधिराष्ट्रीय धारणा मानकर नकार दिया परन्तु द्वितीय विष्व युद्ध के बाद अपनी महाषक्ति का दर्जा खोने के बाद, अमेरिका के साथ अपने विषेष सम्बन्ध रखने तथा राष्ट्रमंडल समुदाय के प्रभावहीन होने के बाद, ब्रिटेन को यूरोपीय संघ में एक नई भूमिका तलाष करने का अवसर दिखाई दिया क्योंकि यूरोपीय संघ से इसकी अपेक्षाएँ भिन्न थीं जिनके कारण निर्णय–निर्माण एक जटिल तथा मुष्किल प्रक्रिया बनी रही।

8.7 अभ्यास प्रष्न

1) यूरोपीय एकीकरण आन्दोलन को आरंभ करने के प्रमुख कारण क्या थे?

2) यूरोपीय संघ तथा राष्ट्रीय पात्रों के सम्बन्ध पर एक लेख लिखिए।

3) द्वितीय विष्व युद्ध के बाद यूरोपीय एकता आन्दोलन के प्रति जर्मनी के दृष्टिकोण का आप किस प्रकार आकलन करेंगे?

4) द्वितीय विष्व युद्ध के बाद फ्रांस द्वारा यूरोपीय एकता के मुद्दे को किस प्रकार देखा गया?

5) द्वितीय विष्व युद्ध के बाद यूरोपीय एकता के मुद्दे पर यूनाइटेड किंगडम का दृष्टिकोण किस प्रकार का था?

8.8 संदर्भ तथा कुछ उपयोगी पुस्तकें

ए. गयोमार्च, एच. मषीन एवं आर. रिटची, *फ्रांस इन दी यूरोपियन यूनियन*, लंदन, 1998।

पी. जे. कटज़न्स्टीन, *टेम्ड पॉवर : जर्मनी इन यूरोप*, इथाका एंड लंदन, 1997।

पुरूषोतम भट्टाचार्य, *ब्रिटेन इन दी यूरोपियन कम्युनिटी*, कलकत्ता एवं नई दिल्ली, 1994।

स्टीफन जार्ज व इआन बैचे, *पोलिटिक्स इन दी यूरोपियन यूनियन* (भाग तीन) ऑक्सफोर्ड, 2001।